हिंदी गद्य:
उद्भव और विकास

(स्नातक द्वितीय वर्ष सेमेस्टर-3) हिंदी 'ग'

डॉ. हेमन्त कुकरेती
डॉ. पार्वती शर्मा चाँदला
डॉ. सुमिता कुकरेती
डॉ. पुनीत चाँदला

अनुक्रमणिका

हिंदी गद्य : उद्‌भव और विकास 5

हिंदी गद्य रूपों का संक्षिप्त परिचय
(कहानी, निबंध, नाटक, रेखाचित्र / संस्मरण)

प्रेमचंद 81
ईदगाह 83

भीष्म साहनी 96
चीफ की दावत 99

बालकृष्ण भट्ट 108
जबान 111

शरद जोशी 116
होना कुछ नहीं का 120

शिवपूजन सहाय 126
गाँव की अनिवार्य आवश्यकताएँ 128

महादेवी वर्मा 131
गिल्लू 137

विष्णु प्रभाकर 141
वापसी 144

विश्वनाथ त्रिपाठी 153
गंगा स्नान करने चलोगे

पाठ्यक्रम

हिंदी गद्य : उद्भव और विकास (हिंदी 'ग')

(उन विद्यार्थियों के लिए जिन्होंने 8वीं कक्षा तक हिंदी पढ़ी है)

इकाई–1 : हिंदी गद्य : उद्भव और विकास
हिंदी गद्य रूपों का संक्षिप्त परिचय
(कहानी, निबंध, नाटक, रेखाचित्र / संस्मरण)

इकाई–2 : 1. ईदगाह–प्रेमचंद
2. चीफ की दावत–भीष्म साहनी

इकाई–3 : 1. जबान–बालकृष्ण भट्ट
2. होना कुछ नहीं का–शरद जोशी
3. गाँव की अनिवार्य आवश्यकताएँ–शिवपूजन सहाय

इकाई–4 : 1. गिल्लू–महादेवी वर्मा
2. वापसी–विष्णु प्रभाकर
3. गंगा स्नान करने चलोगे–विश्वनाथ त्रिपाठी

वाणी प्रकाशन

सहायक ग्रंथ :

- *हिंदी का गद्य साहित्य - रामचंद्र तिवारी*
- *हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - बच्चन सिंह*
- *निबंधों की दुनिया - विजयदेव नारायण साही; निर्मला जैन / हरिमोहन शर्मा*
- *छायावादोत्तर हिंदी गद्य साहित्य - विश्वनाथ प्रसाद तिवारी*
- *हिंदी रेखाचित्र - हरवंश लाल शर्मा*
- *निबंधों की दुनिया - शिवपूजन सहाय; निर्मला जैन / अनिल राय*

बालकृष्ण भट्ट

निबंध सबसे आधुनिक विधा है। नए शिक्षित होते समाज, नए सांस्कृतिक उभार और सतर्क राजनैतिक चेतना के फैलाव के कारण हिंदी निबंध आस्तित्व में आया। नवजागरण की चेतना ने भारतीय मानिसकता को बदलकर बोध, जीवन-शैली और संवेदना को आधुनिक बनाया। नई तकनीक के विकास से मुद्रण यंत्रों का प्रचलन प्रारंभ हुआ। मुद्रण यंत्र के आविष्कार से पहले भारतीय साहित्य में वाचिक परंपरा की प्रधानता थी। भारतेंदु युग में वाचिक परंपरा साहित्य की लिखित परंपरा में परिवर्तित हो गई। वाचिक परंपरा में साहित्य में श्रोता और वक्ता का जीवित संपर्क होता था। यथार्थ संबंधी आग्रह नये प्रश्नों को उभार रहे थे। पारंपरिक साहित्य के शिल्प में नये प्रश्नों के उत्तर नहीं मिल रहे थे। अनुभूतियों की बाहरी और भीतरी सच्चाइयों के प्रस्तुतीकरण के लिए नए साहित्य-शिल्प और नई विधाओं का आविष्कार हुआ। निबंध का विकास भी इन्हीं जरुरतों के कारण हुआ। मानवतावादी विचार ने मनुष्य में स्वतंत्रता को विकसित किया। वह अब अपनी इच्छानुसार अनुभूति को अभिव्यक्ति करने के लिए स्वतंत्र था। निबंध ने इस स्वाधीनता को प्रसारित करने का अवसर दिया। इस प्रकार निबंध ने उस समय के मनुष्य की बड़ी रचनात्मक और सामाजिक आवश्यकता को पूरा किया। शुरुआती दौर में ही हिंदी निबंध को भारतेंदु, बालकृष्ण भट्ट और प्रतापनारायण मिश्र सरीखे प्रतिभाशाली निबंधकार मिल गए। इनमें बालकृष्ण भट्ट निबंध के महत्त्वपूर्ण स्कूल के रूप में आज भी प्रासंगिक हैं।

बालकृष्ण भट्ट का जन्म प्रयाग में हुआ था। वहीं पर वे 'कायस्थ पाठशाला कॉलेज' में संस्कृत के अध्यापक थे। उन्हें अंग्रेजी का भी अच्छा ज्ञान था। डॉ. बच्चन सिंह के अनुसार भट्टजी और प्रतापनारायण मिश्र भारतेंदु मंडल के सबसे अधिक चमकदार नक्षत्र थे। संस्कृत शिक्षा के कारण उनके व्यक्तित्व में एक प्रकार का परिष्कार और परिपक्वता आ गयी थी जबकि प्रतापनारायण मिश्र के व्यक्तित्व में सरलता, मनमौजीपन और गँवई का रंग था। इसमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि संस्कृत पढ़कर भी वे रूढ़ियों के परम शत्रु थे। हिंदी

साहित्य में संस्कृत के विद्वानों की लम्बी परंपरा है जो अंग्रजी-दां लेखकों की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छे साहित्यकार और रूढ़िभंजक थे।

इस युग के प्रत्येक लेखक के अपने पत्र थे। भट्टजी ने 1872 में 'हिंदी प्रदीप' का संपादन आरंभ किया। प्रत्येक प्रकार की कठिनाई झेलते हुए भी वे इसे तैंतीस वर्षों तक निकालते रहे। पत्र के मुखपृष्ठ पर छपा रहता था-'शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रकट है आनंद भरे।' देश-प्रेम का जैसा उत्साह इस पत्र ने दिखलाया था वैसा अन्यत्र नहीं देखा गया। उन्हें राजभक्ति और देशभक्ति की खिचड़ी बेहद नापसंद थी। उस काल में वे इस तरह के अकेले व्यक्ति थे। उन्होंने ठीक ही लिखा था-"हमारा कथन है कि राजभक्ति और प्रजा का हित दोनों का साथ कैसे निभ सकता है। जैसे हँसना और गाल फुलाना, बहुरी चबाना और शहनाई का बजाना एक संग नहीं हो सकता, ऐसे ही यह भी असंभव और दुर्घट है।" अंग्रेजों को वे कुटिलता की खान कहते हैं। वे राजनीति में तिलक के अनुयायी थे। सरकारी पिट्ठू होने के कारण राजा शिवप्रसाद और सैयद अहमद खाँ को उन्होंने आड़े हाथों लिया है। महावीरप्रसाद द्विवेदी को भट्टजी की पक्षधरता और कट्टरता पसंद न थी।

उनके निबंधों में विषयवस्तु और शैली दोनों का वैविध्य मिलता है। वे एक ओर व्यंग्य-विनोदपूर्ण निबंध लिखते थे तो दूसरी ओर विचारप्रधान मनोवैज्ञानिक निबंध। उनके भय, दृढ़ता, प्रेम और भक्ति आदि निबंधों का विकास शुक्लजी के मनोवैज्ञानिक निबंधों में देखा जा सकता है। गद्य काव्य के आदि आचार्य वे ही हैं। उनके 'चंद्रोदय' निबंध से ही गद्य काव्य का समारंभ होता है। बालकृष्ण भट्ट शिष्ट हिंदी व्यंग्य के पितामह है। "कहने को मनुष्य के शरीर में 5 इंद्रियाँ हैं और यह पुतला उन्हीं 5 ज्ञानेंद्रियों का बना है किंतु इन इंद्रियों का प्राबाल्य केवल अपने विषय में है अपना विषय छोड़ दूसरे के विषय में वे कुछ अधिकार नहीं रखतीं जैसा कर्णेद्रिय का अधिकार शब्द पर है तो कान को रूप से जो नेत्र का विषय है कुछ सरोकार नहीं है। ऐसा ही नेत्र को त्वगिंद्रिय से जिसका अधिकार स्पर्श पर है कुछ सरोकार नहीं है। कड़ी वस्तु देखकर नेत्र को न कुछ दुःख मिलता है न मुलायम को देख कुछ सुख। नासिका का विषय सुगंधि दुर्गंधि है शेष चार शब्द स्पर्श रूप से रस से नासिका को कोई प्रयोजन नहीं है-पर जबान सब इंद्रियों में इतनी प्रबल है कि वह जाइका होने के समय विषय रस के जो इसका प्रधान विषय है शब्द स्पर्श रूप गंध अपने साथ समेटती है।" उनके व्यंग्य मिश्रजी के व्यंग्य की अपेक्षा अधिक मारक होते हैं। उर्दू के चलते शब्दों के प्रयोग में उन्हें कोई आपत्ति नहीं है। यथास्थान वे 'फीलिंग', 'परसेप्शन' आदि

अंग्रेजी के शब्दों को भी कोष्ठ में रख देते हैं। पर उनकी भाषा पूर्वीपन से मुक्त नहीं है। मुहावरों का यथास्थान प्रयोग उनकी भाषा को अत्यंत सजीव और प्रसन्न बना देता है। स्पष्ट है कि बालकृष्ण भट्ट ने अपनी निजी-साहित्यिक पसंद-नापसंद को तरजीह देते हुए हिंदी निबंध का विकास किया। उन्होंने निबंध के कई नए प्रारूप, विषय और शैलियाँ प्रस्तावित की है।

प्रतिपाद्य : जबान

बालकृष्ण भट्ट भारतेंदु युग के महत्वपूर्ण निबंधकार थे। उनके निबंधों में रूढ़ियों के प्रति असंतोष है। वे नये सामाजिक मूल्यों को स्थापित करने के पक्षधर थे। उनके निबंधों में एक प्रकार की नाटकीयता है। वह नाटकीयता वैचारिक टकराहट से उत्पन्न है। नए और पुराने जीवन मूल्यों की टकराहट में इस नाटकीयता की सृष्टि हुई। भट्ट जी के निबंध मनोवैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक थे। उनमें तर्क की प्रबल शक्ति थी। वे अपने निबंधों में तर्क से प्रभावित करते हैं। विद्वता के साथ गांभीर्य का सहज योग बालकृष्ण भट्ट के निबंधों में देखने को मिलता है। 'माधुर्य' और 'आशा' उनके मनोवैज्ञानिक निबंध है। इसके अतिरिक्त उन्होंने राजनैतिक और सामाजिक निबंध भी लिखे। मुहावरे का प्रयोग उनकी भाषा शैली की विशेषता है। 'आँख', 'कान' और 'नाक' आदि निबंधों में बालकृष्ण भट्ट मुहावरे की झड़ी बाँध देते हैं। इसी क्रम में इनका निबंध 'जबान' आता है जिसमें भट्ट जी ने वाणी के महत्त्व पर अपने विचारों को हास्य-व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। वाणी के द्वारा किस प्रकार मीठे वचन बोलकर, व्यवहार द्वारा हम जगत में सुखी जीवन व्यतीत कर सकते हैं। कड़वी जुबान से व्यक्ति केवल बदनामी लेता है अतः व्यक्ति को संतुलित और मीठी बोली वाली जबान अपनानी चाहिए। अपने इस निबंध में उन्होंने शैली के स्तर पर कई प्रयोग किए हैं। उनके निबंधों की शैली भावात्मक, व्यंग्यात्मक और विश्लेषणात्मक है। प्रतापनारायण मिश्र और बालकृष्ण भट्ट के संबंध में आचार्य शुक्ल ने लिखा है 'पंडित प्रतापनारायण मिश्र और बालकृष्ण भट्ट ने हिंदी गद्य साहित्य में वही काम किया है, जो अंग्रेजी गद्य साहित्य में एडीसन और स्टील ने किया था।' बालकृष्ण भट्ट ने निबंध में स्थानीयता का प्रवेश कराया। इसका विकास बाद के निबंधकारों ने किया। इसके लिए उन्होंने भाषा और विषय के अभिजात को तोड़ा है। अटपटे और जटिल विषयों पर निबंध लिखने का जोखिम और साहस उनमें लगातार बना रहा। चार खंडों में प्रकाशित उनके निबंध रचनात्मक सामर्थ्य का सबूत है।

जबान

बालकृष्ण भट्ट

कहने को मनुष्य के शरीर में 5 इंद्रियाँ हैं और यह पुतला उन्हीं 5 कर्मेंद्रियों का बना है किंतु उन-उन इंद्रियों का प्राबल्य केवल अपने विषय में है अपना विषय छोड़ दूसरे के विषय में वे कुछ अधिकार नहीं रखतीं जैसा कर्णेंद्रिय का अधिकार शब्द पर है तो कान को रूप से, जो नेत्र का विषय है कुछ सरोकार नहीं है। ऐसा ही नेत्र को त्वगिंद्रिय से, जिसका अधिकार स्पर्श पर है, कुछ सरोकार नहीं है। कड़ी वस्तु देख नेत्र को न कुछ दुःख मिलता है न मुलायम को देख कर सुख। नासिका का विषय सुगंधि-दुर्गंधि है, शेष चार-शब्द स्पर्श रूप रस-से नासिका को कोई प्रयोजन नहीं है।

पर जबान सब इंद्रियों में इतनी प्रबल है कि यह जाइका लेने के सिवाय रस के जो इसका प्रधान विषय है, शब्द स्पर्श रूप गंध सबों को अपने साथ समेटती है। भोजन के समय जरा भी दुर्गंधि हो या खाना जिसे हम खा रहे हैं, गंधाता हो, कभी न खाया जायेगा। खाने की कौन कहे मिचलाई आने लगेगी, जो पेट में है वह भी बाहर निकल पड़ेगा। उनकी तो बात ही निराली है जिन्हें दुर्गन्धि ही सुगंधि है। हमारे साहबान अंग्रेजों के साफ और सुथरे दस्तरखान पर चमाचम रकाबियों में जब तक महीनों की सड़ी मांस या मछली और पनीर न रक्खी हो तब तक लज्जत और जाइका नहीं जिसकी झलक पाय दूर ही से नाक सड़ती है। जितनी ही जियादह झझका हो उतना ही जियादह जायका! किंतु सफाई को इतना अधिक अधिकार दिया गया है कि होटलिये हिंदुस्तानी भाई भी उसी सफाई पर मोहित हो साहबों की झूठी रकाबियों पर मक्खी-सा जा टूटते हैं। इलायची केवड़ा केसर आदि सुगंधित द्रव्य इसी प्रयोजन से भोजन के पदार्थों में मिलाये जाते हैं, जिससे उसमें सुगंधि आ जाय, और सुगंधित भोजन मामूली भोजन से सवाया अधिक खाया जाता है। अब दूसरी नेत्र को जिह्वा से क्या सरोकार है। साफ और स्वच्छ पदार्थ देखते ही जीभ से पानी टपकने लगता है स्वादिष्ट भोजन कसीफ और मैला हो तो, भाव दुष्ट होने से चित्त उस पर इतना नहीं लहालोट होता जितना साफ और स्वच्छ पदार्थ पर जो नेत्र को भावता हो। इसी तरह

स्पर्श-सुख का सूक्ष्म अनुभव जैसा जीभ कर सकती है वैसा शरीर के दूसरे हिस्से नहीं कर सकते। इसी से जीभ का रसना यह नाम सब भाँति सार्थक है। ईश्वर करैं रसना किसी की रस के अनुभव में तेज और चोखी हो। चटोरी जीभ लाखों रुपया चाट बैठती है और हविस उसकी नहीं बुझती न जानिये कितने लोग केवल चटोरी जीभ के कारण लाख का घर खाक में मिलाय सब चाट बैठे। जुआ शराब ऐयाशी चटोरापन इन चारों ऐबों में किसी एक का हो जाना बरबादी के छोर तक पहुँचाने के लिए काफी है। दैव के कोप से जिनमें चारों हैं उनकी सपूती और लियाकत का भला क्या कहना।

तावज्जितेन्द्रियो न स्याद्विजितान्येन्द्रियकः पुमान्।
न जयेद्रसनं यावत् जितं सर्वं जिते रसे।।

तब तक मनुष्य जितेंद्रिय नहीं हो सकता चाहे और सब इंद्रियों को वश में कर भी लिया हो जब तक रसना को अपने वश में नहीं किया। एक जिह्वा को काबू में रखकर बाकी और सारी इंद्रियाँ काबू में आ सकती हैं। और भी–

जिह्वयातिप्रमाथिन्या जनो रसविमोहिनः।
मृत्युच्छत्यसद्‌बुद्धिर्मीनस्तु बडिशैर्यथा।।

चटोरी जीभ के कारण मनुष्य मूढ़ बन मछली के समान जिह्वा के वश में पड़ नष्ट हो जाता हैं।

जितने खाद्य पदार्थ हैं उनका स्वाद या जाइका जिह्वा के अग्रभाग से क्षण भर के संयोग का है, गले के नीचे उतरा कि स्वादिष्ट और बेलज्जत भोजन दोनों एक से हैं–

आस्वाद्यस्य हि सर्वस्य जिह्वाग्रे क्षणसंगमः।
कण्ठनाडीमीतं च सर्वं कदशनं समम्।।

केवल स्वाद चखना जीभ का फायदा हो सो नहीं वरन् शरीर के और अंग की अपेक्षा इसके गुण या दोष भी सबसे अधिक प्रबल हैं–बड़े से बड़ा फायदा और बड़े से बड़ा नुकसान दोनों इसके द्वारा हो सकते हैं–गाँठ का एक पैसा भी बिना गंवाये मीठी जबान लाखों का फायदा सहज में कर सकती है–

"कागा काको धन हरै कोयल काको देय।
मीठी वचन सुनाय के जब अपनो करि लेय।।"

(नुकसान भी आदमी कड़ई या बदजबानी से इतना उठाता है कि सब उमदा सिफतों के होते भी लोग कटुभाषी या बदजबान के पास जाते हिचकते हैं, कटहा कुत्ता-सा वह सबों से बरकाया जाता है। जबान को समस्त सभ्यता और शाहस्तगी का सारांश कहना अनुचित नहीं है। अब तक जो कुछ तरक्की संसार

में हुई है उसका द्वार जबान ही है। इंसान और हैवान में यही तो अंतर है कि जानवर हम लोगों की तरह अपने ख्याल जबान से कहकर नहीं अदा कर सकते, नहीं तो और सब इंद्रियों के लालन-पालन में आहार निद्रा भय मैथुन आदि के द्वारा पशु और मनुष्य की समता होने में कौन-सा अंतर बचा रहा।) लिखकर अक्षरबद्ध रख छोड़ने का क्रम तो बहुत दिनों के बाद निकला। प्रारंभ में जबान से कहना और कान से सुन उसे याद रखना ही बहुत दिनों तक जारी रहा। ज्यों-ज्यों लोग अधिक सभ्य होते गये, हिंदी की चिंदी निकालने लगे। तब वे ही सूत्र जो जबान से कहे गये उन पर भाष्य शरह और कमेंटरी होती गयी और उन्हें बृहत् होने के कारण स्मरण-शक्ति के बाहर समझ लोगों ने संकेत के ढंग पर अक्षर निकाले और लिखकर रख छोड़ने लगे।

तात्पर्य यह है कि यावत् विद्या और ज्ञान पहले जिह्वा से कहकर प्रकट न किये गये होते तो केवल लेख-शक्ति से कुछ न होता, न हमारी सभ्यता इस छोर तक पहुँचती। जबान को दबाना क्रोध को दबा रखने का एक ही उपाय है। कई बार की आजमाई हुई बात है कि कैसा ही क्रोध आया हो चिल्लाने के एवज धीरे-धीरे बोलो, क्रोध क्रम-क्रम आप ही शांत हो जाएगा। जीभ समाज को कहाँ तक लाभदायक हुई सो दिखला चुके।

अब धर्म संबंध में जिह्वा पर लगाम रखने की कितनी आवश्यकता है सो दिखलाते हैं। सच तो यों है कि जीभ पर बिना कोड़ा रखे धर्मनिष्ठों को धर्मधुरंधर बनने का दावा करना सर्वथा व्यर्थ है। वह अवश्य धोखे में पड़ा है जो अपने को धर्मनिष्ठ तो मानता है पर जीभ को अपने काबू में नहीं किया। झूठ बोलना, झूठी गवाही देना, चुगली बदगोई इत्यादि से बचना ही जीभ पर लगाम नहीं कहलावेगा क्योंकि झूठी गवाही चुगली, गाली इत्यादि बड़े-बड़े पापों का विषय निराला है कानून फौजदारी "क्रिमनिल ला" के मद्द में उसकी गिनती है और सरकार की ओर से उसके लिए दंड नियत है। जिस पर जान-बूझकर शामत सवार होगी वही ऐसे-ऐसे अपराधों में अपने को फँसाय कैद और जुरमाने का सजावार बनावेगा।

बल्कि जबान में लगाम से प्रयोजन गप्पी और वाचाल का है, जिसे अपनी गम्माष्टक के समय आगे-पीछे का कुछ ख्याल नहीं रहता, न अपनी या पराये की हानि-लाभ का। जिनको गप्प हाँकने की आदत हो गई है वे इसे अपने लिए दिलबहलाव मानते हैं इसमें किसी तरह ऐब या पाप नहीं समझते और जब उनके गप्प का विषय चुक जाता है, कोई बात नहीं रहती जिस पर वे अपने गप्प को काम में लावें तब वे कुछ ऐसी कल्पना किया करते हैं जिससे दूसरों को बदनाम करैं, चीट उड़ावें, किसी का कुछ कलंक उद्घाटन करैं इत्यादि। चुप उनसे नहीं

रहा जाता, कुछ कहना अवश्य–

"मुखमस्ति च वक्तव्यं शतहस्ता हरीतकी।"

मुख में जीभ ईश्वर ने दी है तो कुछ कहना चाहिए। हाँ सुनिये सौ हाथ की हरै–ऐसे लोग जिन्हें बहुत बकने का अभ्यास हो गया है अपनी बकवास की जोश में वह बात कह डालते हैं, जो न कहना चाहिए या जिसे कहकर वे पीछे पछताते हैं। यहाँ तक बेफायदा बकवाद उन्हें पसंद आती है कि जब तक मन मानता बक न लें अचायेंगे नहीं, जैसा स्त्रियों में बहुधा ऐसी होती हैं कि 24 घंटे में कम से कम 6 घंटे लड़ न लेंगी उन्हें अन्न न पचेगा–नौवाबों में किस्सेगो इस किस्म के रहते थे कि दिन भर कहो बकते रहें, उनके किस्से की लय न टूटे। चंडूखाने में चंडूबाजों की गप्प मशहूर हुई है। इन बकवादियों की भी कई किस्में हैं। कितने तो ऐसे हैं कि उनकी कोई सुने या न सुने उनको बक जाने से काम। कितने ऐसे हैं कि उनकी बकबक का किसी ने निरादर किया कि उन्हें क्रोध आ जाता है, बिगड़ खड़े होते हैं। कितने ऐसे हैं कि अपनी बकवाद को रंगीन और दिलचस्प न समझ सुनने वालें को नापसंदीदा जान चट्ट उसमें कुछ ऐसा ईजाद कर देते हैं कि थोड़ी देर के लिए सबों का ध्यान उस ओर मुखातिब हो जाता है। इसे वे एक हुनर मानते हैं और इस ढंग से बात करते हैं कि उनकी सरासर झूठ बात सब लोग सच मान लेते हैं।

जीभ को न दबाना अनेक बुराई और क्लेश का कारण है। महाभारत ऐसा सर्वनाशी संग्राम इसी जीभ के न दबाने की बदौलत किया गया। द्रौपदी ने यदि दुर्योधन को 'अंधे के अंधे होते हैं' इस मर्मवेधी वाक्य को कह मर्म ताडन न किया होता और दुर्योधन को पांडवों से खार न पैदा हुई होती तो परिणाम में 18 अक्षौहिणी सेना काहे को कट मरती, जिसका धक्का जो हिंदुस्तान को लगा बल्कि जैसा कारी घाव इसके शरीर में हो गया, उसकी मरहमपट्टी आज तक न हो सकी। इन्हीं सब कारणों से सिद्ध हुआ, मनुष्य अपनी जीभ पर जहाँ तक चौकसी कर सके और उसको दबा सके, दबावै। इस पर चौकसी रखने से अनेक भलाइयाँ हैं और स्वच्छंद कर देने से सब तरह की बुराइयों की संभावना है।

जीभ को दबाना और चौकसी रखने से यह प्रयोजन नहीं है कि हम सर्वथा मूकभाव धारण कर लें, किंतु चुप रहने के भी मौके हैं। विद्यावृद्ध, वयोवृद्ध या संसार की अनेक ऊँची-नीची बातों के अनुभव में जो अपने से अधिक हैं उनके सामने शालीनता के ख्याल से चुप रहना होता है जिसमें वह कोई न समझे कि यह छोटे मुँह बड़ी बात कह रहा है। बहुत बकने वालों में कितने ऐसे हैं कि घंटों तक बक जाते हैं, पर उनके बात करने का खास मतलब क्या था, कुछ समझ

में नहीं आता। इस तरह पर बात करने वालों की कई किस्में हम यहाँ पर गिना सकते हैं। एक वे हैं कि हँसते जाते हैं, बात करते जाते हैं– "हस्नूर्मूर्खः", "हसन्नजल्पे" इत्यादि वाक्य साक्षी हैं कि बात कहने का यह क्रम मूर्खता की पहचान है। एक सुखुन तकिया वाले होते हैं। दस लफ्ज का एक जुमला होगा तो पाँच लफ्ज उसमें उनके तकियाकलाम के होंगे। इनमें जिन्हें गाली की सखुन-तकिया पड़ जाती है उनकी घिनौनी बात कान को महा असह्य मालूम होती है। एक वज्रभाषी होते हैं। बात उनके मुख से क्या निकली मानो गाज गिरी। ऐसों की आदत होती है कि जहाँ कोई बात बनती हो तो ये वहाँ पहुँच उसे बिगाड़ देने में कसर न करेंगे।

अतीम रोषो कटुका च वाणी नरकस्य चिह्नं नरकागतस्य।

उनकी व्रज-भाषी कटु वाणी इस बात का चिह्न है कि वे नरक झेलकर आए हैं और मरकर फिर नरक में जायेंगे। इसी के विरुद्ध एक ऐसे भी सुकृती जन हैं जो अपनी मीठी बोली से मन खींच लेते हैं। धन्य हैं वे स्वर्गगामी जन, इत्यादि। जिह्वा के संबंध में जो कुछ वक्तव्य था हमने सब कह सुनाया।